International Journal of Jyotish Research: 2017; 2(1): 15-21

International Journal of Jyotish Research
(वेदचक्षु)

ISSN: 2456-4427
Impact Factor: RJIF: 5.11
Jyotish 2017; 2(1): 15-21
© 2016 Jyotish
www.jyotishajournal.com
Received: 08-11-2016
Accepted: 10-12-2016

डॉ० सुनीता सैनी
असिस्टेण्ट प्रोफेसर, संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत।

Correspondence
डॉ० सुनीता सैनी
असिस्टेण्ट प्रोफेसर, संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत।

अग्नि पुराण में उपलब्ध ज्योतिषशास्त्रीय सिद्धान्त

डॉ. सुनीता सैनी

प्रस्तावना

अग्नि पुराण में वर्णित विभिन्न विषयों में ज्योतिष शास्त्र का भी समावेश हैं। 'ज्योतिष' शब्द से अभिप्राय है - "ज्योतिःसूर्यादिगत्यादिके प्रतिपाद्यतयास्त्यस्य अच्"।[1] अर्थात् सूर्यादि की गति का प्रतिपादन करने वाला शास्त्र ज्योतिष है।

डॉ० नेमीचंद शास्त्री के अनुसार - "ज्योतिष शास्त्र की व्युत्पत्ति 'ज्योतिषां सूर्यादिग्रहाणां बोधके शास्त्रम्' की गई है (अर्थात् सूर्य आदि ग्रह और काल का बोध कराने वाले शास्त्र को ज्योतिष शास्त्र कहा जाता है। इसमें प्रधानतः ग्रह, नक्षत्र , धूमकेतु आदि ज्योतिःपदार्थों का स्वरुप, संचार परिभ्रमण काल ग्रहण और स्थिति प्रभृति समस्त घटनाओं का निरुपण एवं ग्रह नक्षत्रों की गति स्थिति और संचारानुरूप शुभाशुभ फलों का कथन किया जाता है। कुछ मनीषियों का अभिमत है कि नभोमंडल में शुक्र ज्योति संबंधी विविध विषयक विद्या को ज्योतिर्विद्या कहते हैं। जिस शास्त्र में इस विद्या का सांगोपांग वर्णन रहता है , वह ज्योतिष शास्त्र है।"[2]

मुंडकोपनिषद् में द्विविध विद्याओं का उल्लेख मिलता है - परा और अपरा।इस उपनिषद् में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद व ज्योतिष अपरा विद्या के अंतर्गत परिगणित हैं।[3]

इन अपरा विद्याओं में से शिक्षा, कल्प, निरुक्त, छंद, व्याकरण एवं ज्योतिष को षड्वेदांग कहा जाता है। पाणिनीय शिक्षा के एक श्लोक में वेद भगवान के इन छः अंगों का तदनुरूप स्थान निर्धारित किया गया है और वहाँ बताया गया है कि सांगवेद पढ़ने पर ही ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। छंद वेद के पैर, कल्प हाथ, ज्योतिष नेत्र, निरुक्त कान, शिक्षा नाक एवं व्याकरण को मुख बताया गया है।[4]

यह वेदांग ज्योतिष ही परवर्ती रचे गए भारतीय ज्योतिष शास्त्र का मूल आधार है। गोरख प्रसाद के अनुसार वेदांग ज्योतिष के दो पाठ मिलते हैं :- एक ऋग्वेद ज्योतिष और दूसरा यजुर्वेद ज्योतिष। दोनों में विषय प्रायः एक से हैं परंतु यजुर्वेद ज्योतिष में ४४ श्लोक हैं और ऋग्वेद ज्योतिष में केवल ३६। दोनों में अधिकांश श्लोक एक ही हैं, परंतु उनका क्रम दोनों में विभिन्न है। कुछ श्लोकों में शब्दों का भी कुछ अंतर है, यद्यपि अर्थ एक ही है। ऋग्वेद ज्योतिष के सात श्लोक यजुर्वेद ज्योतिष में नहीं है और यजुर्वेद ज्योतिष के १४ श्लोक ऋग्वेद ज्योतिष में नहीं है। ऐसा संभव है कि ज्योतिष कि यह दोनों पुस्तिकाएं किसी बड़े ग्रंथ से संकलित की गई हैं और उस बड़े ग्रंथ का अब लोप हो गया है।[5]

ज्योतिष के विषय

वराहमिहिर के अनुसार

"ज्योतिः सास्त्रमनेक भेद विषयं स्कन्धत्र्याधिष्ठितं।
तत्कात्स्न्र्योपनयस्य नाम मुनिभिः संकीर्त्यते संहितां।
स्कन्धेऽस्मिन् गणितेन या ग्रःगतिस्तन्त्राभिधनस्त्वसौ।
होरान्योऽङ्ग विनिश्चश्च कथितः स्कन्धस्तृतीयोऽपरः।।[6]

अर्थात् अनेक भेदों से युक्त ज्योतिष शास्त्र के तीन स्कंध (संहिता, तंत्र, होरा) हैं। जिसमें संपूर्ण ज्योतिष शास्त्र के विषयों का वर्णन हो उसको संहिता कहते हैं। जिसमें गणित द्वारा ग्रहगति का निर्णय किया गया हो उसको तंत्र कहते हैं। इनके अतिरिक्त जातक फल मुहूर्त आदि का निर्णय जिसमें हो, उसको होरा स्कंध कहते हैं।

वाचस्पति गैरोला के अनुसार ज्योतिष - शास्त्र को पहिले-पहल गणित व फलित इन दो रूपों में स्वीकार किया गया। बाद में यह उसके स्कन्धत्रय के नाम से कहा जाने लगा, जिसको सिद्धांत, संहिता और होरा, इन तीन विभागों में विभाजित किया गया और सम्प्रति उसका पंचरूपात्मक होरा, गणित, संहिता, प्रश्न और निमित्त में विकास हुआ।[7]

वेदांग ज्योतिष का रचनाकाल लगभग १२०० ई. पू. का है और उसके बाद लगभग १००० वर्ष तक का कोई भारतीय ज्योतिष ग्रंथ नहीं मिलता तब कौटिल्य के अर्थशास्त्र से (जो लगभग ३०० ई. पू. का है) पता चलता है कि उस समय भी ज्योतिष में विशेष उन्नति नहीं हो पाई थी। कौटिल्य के अर्थशास्त्र के लगभग १०० वर्ष बाद की एक पुस्तक 'सूर्यप्रज्ञप्ति है' जिसमें जैनियों के मतानुसार विश्व की रचना दी गई है। इसके ज्योतिष संबंधी नियम वेदांग ज्योतिष से मिलते-जुलते हैं। इसके बाद लगभग ७०० वर्ष के भीतर का लिखा हमें कोई ग्रंथ नहीं मिलता। तब सन् ४९९ ई. का आर्यभट्ट लिखित 'आर्यभट्टीय' मिलता है।[8]

आर्यभट्ट के पश्चात तो वराहमिहिर आदि अनेक विद्वान हुए जिन्होंने ज्योतिष के ग्रंथों की रचना की।

पौराणिक ज्योतिष

ज्योतिष का वर्णन पुराणों में संक्षिप्त ही है। गरुड़ पुराण में 5 अध्याय (59-64) इसी विषय के हैं जिनमें फलित ज्योतिष का ही मुख्यतया विवरण है। नक्षत्र देवता कथन, योगिनी स्थिति का निर्णय, सिद्धियोग, अमृतयोग, दशा विवरण, दशाफल, यात्रा में शुभाशुभ का कथन, राशियों का परिमाण, विभिन्न लग्नों में विवाह के फल आदि विषयों का विवरण इन अध्यायों में दिया गया है। नारदीय पुराण के नक्षत्र कल्प में भी (१/५५,५६) नक्षत्र संबंधी बातें दी गई हैं। इस पुराण के ५४वें अध्याय में गणित ज्योतिष का वर्णन है।अग्नि पुराण के कुछ अध्यायों में भी ज्योतिष शास्त्र का वर्णन उपलब्ध होता है।

अग्नि पुराण के ज्योतिष शास्त्र का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि विवेच्य पुराण में ज्योतिष के दो ग्रंथों का सार दिया गया है।

अग्नि पुराण में एक स्थान पर उल्लेख मिलता है कि - अग्नि देव ने शुभाशुभ को बताने वाले ४लाख श्लोकों से निबंध उस ज्योतिष शास्त्र का वर्णन यहाँ किया है जिसको जान लेने से सभी वस्तुओं का ज्ञान हो जाता है।[9]

इसके अतिरिक्त अध्याय १२३-१३९ में युद्धजयार्णव है, युद्ध में विजय प्राप्ति के लिए जिन तांत्रिक कर्मों का अनुष्ठान किया जाता है, वे यहां कहे गए हैं। युद्धजयार्णव नामक कोई ग्रंथ अवश्य था, क्योंकि निबंध ग्रंथों में इस ग्रंथ का उल्लेख मिलता है।[10]

अग्नि पुराण १२१ वें अध्याय में ज्योतिष शास्त्र का सार वर्णित है। इस के मुख्य विषय हैं- विवाह प्रकरण, अन्य संस्कार प्रकरण, मुहूर्त प्रकरण, यंत्र-तंत्र एवं विभिन्न नक्षत्रों में रोग विचार आदि।

विवाह प्रकरण

इस प्रकरण में सर्वप्रथम भकुट विचार किया गया है। अग्नि पुराण के अनुसार स्त्री के विवाह के संबंध में षडाष्टक,द्विर्द्वादश एवं त्रिकोण नवपंचम दोष में विवाह नहीं करना चाहिए। शेष में विवाह शुभ होता है।[11] इन दोषों से तात्पर्य एवं वधू की राशि परस्पर गणना पर ६-८, २-१२, ९-५ नहीं होनी चाहिए। इन राशियों वाले स्त्री पुरुषों का वैवाहिक जीवन उत्तम नहीं होता है।

उपर्युक्त दोष होने पर भी यदि राशियों के स्वामी में मैत्री हो तो २-१२, ९-५ दोष में भी विवाह संबंध कर लेना चाहिए। परंतु षडाष्टक दोष में विवाह कदापि उचित नहीं रहता।[12]

ज्योतिर्विदाभरणम् में उल्लेख मिलत है:-

"शत्रुमार्परिबर्हगं नरं प्राप्य पुण्यमतिगं हि कन्यका।
शत्रुनाशगमिह स्वभात्तुं किं खेटसख्यविधिना शमश्नुते।।"[13]

विवाह के लिए अशुभ काल

अग्नि पुराण में ऐसे कुछ कालों का उल्लेख है जिनमें विवाह करना अशुभ बताया गया है। ऐसे समय का योग बनने पर विवाह को स्थगित कर देना चाहिए।

अग्नि पुराण के अनुसार बृहस्पति व सूर्य के अस्त होने पर विवाह संबंध करने से स्त्री- पुरुष दोंनो की मृत्यु हो जाती है। बृहस्पति के क्षेत्र में सूर्य और सूर्य के क्षेत्र में बृहस्पति के जाने से विवाह करने पर कन्या के लिए वही वैधव्य कारक होता है। इसी प्रकार चैत्र व पौष के मास में रिक्ता (चतुर्थी, चतुर्दशी व नवमी तिथि) तथा अमावस्या तिथियों में, मंगल व

सूर्य वारों में तथा आषाढ़ शुक्ल एकादशी से कार्तिक शुक्ल एकादशी पर्यंत विवाह करना अशुभ है।[14]

विवाह के लिए शुभ काल

विवाह के लिए संध्या समय शुभ होता है। रोहिणी, तीनों उतरा, मूल, स्वाति, हस्त, रेवती, नक्षत्रों में तथा तुला और मिथुन लग्न विवाह करना उत्तम है।[15]

संस्कार प्रकरण

यूं तो अग्नि पुराण में एक स्थान पर ४८ संस्कारों का उल्लेख किया गया है[16] परंतु गृहस्थ आश्रम का वर्णन करते हुए मात्र छः संस्कारों का ही वर्णन किया है।[17] इसी प्रकार से ज्योतिष के वर्णन में भी कुछ ही संस्कारों के विषय में शुभाशुभ विचार किया गया है। ये संस्कार हैं - विवाह (पूर्व वर्णित), कर्णवेध, पुंसवन, अन्नप्राशन, चूडाकरण, क्षौर कर्म, उपनयन संस्कार व समावर्तन संस्कार आदि।

पुंसवन संस्कार के लिए शुभ समय है - श्रवण, मूल, पुण्य आदि नक्षत्र, रविवार, मंगल व बृहस्पति आदि वार, कुंभ, सिंह एवं मिथुन राशि।

अन्नप्राशन संस्कार के लिए शुभ समय है- शुक्र व बृहस्पति आदि वार, मकर व मीन आदि राशि और हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, कृतिका, पुष्य, रोहिणी तथा मृगशिरा नक्षत्र।

क्षौर कर्म के लिए उचित समय है- रवि, सोम बुध, बृहस्पति तथा शुक्र आदि पांच वार, माघ से प्रारंभ करके छः मास।

कर्णवेध संस्कार के लिए शुभ समय है - बुध व बृहस्पति और पुष्य, श्रवण व चित्रा नक्षत्र।

उपनयन संस्कार के लिए शुभ समय है- माघ आदि छः मासों में मेखला बंधन अथवा यज्ञोपवीत या उपनयन संस्कार करना शुभ है।

चूड़ाकरण संस्कार श्रावण आदि मास में शुभ होते हैं।

समावर्तन संस्कार के लिए शुभ समय क्षौरकर्म वाला समय ही है।

इस प्रकार से इतने ही संस्कारों का वर्णन अग्नि पुराण में किया गया है।[18] विभिन्न संस्कारों के अतिरिक्त कुछ सामान्य एवं विशेष कर्मों के लिए भी शुभाशुभ का विचार पुराण में देखने को मिलता है जैसे-ताम्बूल भक्षण, नवीन अन्न या फल भक्षण, औषधि सेवन, रोग विमुक्त होने पर स्नान क्रिया, धनुर्वेद प्रारंभ करना, नवीन वस्त्र धारण करना, रत्न धारण करना, वस्तुओं का क्रय-विक्रय, राज्याभिषेक, गृहारंभ, गृहप्रवेश, नौका निर्माण, कृषि कार्य आदि।

उपर्युक्त क्रियाओं के करने से पूर्व भी शुभ व अशुभ का विचार करने का निर्देश किया गया है। इन क्रियाओं के लिए निर्धारित नक्षत्रों में, राशियों में अथवा वारों में विहित कार्यों को करने से उत्तम फल मिलता है जबकि विहित समय के प्रतिकूल कार्य करने से हानि होती है। अग्नि पुराण में इन शुभ नक्षत्रों आदि का वर्णन मिलता है।

जैसे-

"स्वाति सौम्ये च भैषज्य कुर्यादन्यत्र वर्जयेत"[19]
तथा "रेवत्यिश्वधनिष्ठासु हस्तादिषु च पञ्चसु।
शंख विद्रुमरत्नानां परिधानं प्रशस्यते।।"[20]

अग्नि पुराण में उल्लेख है कि गुरु, शुक्र व बुध वारों में नवीन वस्त्र धारण करना शुभ है किंतु विवाह आदि विशेष अवसर पर नक्षत्र वे दिन का विचार करना आवश्यक नहीं है।[21]

इनके अतिरिक्त कुछ तांत्रिक क्रियाओं का भी वर्णन है जिसमें कुछ विशिष्ट मंत्रों से यंत्र निर्माण कर अभीष्ट फल की सिद्धि करनी बताई गई है।

इन तांत्रिक क्रियाओं से वशीकरण, स्तंभन, मित्रता, व शत्रुता आदि क्रियाएं संभव होती हैं।

उदाहरण के लिए- मंगल के दिन मिट्टी के चौकोर पट या भोजपत्र पर गोरोचन तथा कुमकुम से दिशाओं में आठ 'ह्री' मंत्र लिखकर मध्य में शत्रु का नाम लिखकर उस यंत्र को वस्त्र में लपेट कर गले में धारण करने से शत्रु निःसंदेह वशीभूत हो जाता है।[22]

अग्नि पुराण में उन नक्षत्रों की सूची भी दी गई है जिनमें मनुष्य को रोग होने से अलग-अलग समय तक कष्ट भोगना पड़ता है।

जैसे- कृतिका नक्षत्र में रोग होने से तीन रात, मृगशिरा नक्षत्र में रोग होने से पांच रात्रि, और आर्द्रा नक्षत्र में रोग होने से मृत्यु, पुनर्वस व पुष्य नक्षत्र में रोग होने से सात रात्रि कष्ट होता है।[23]

इसी प्रकार से अग्नि पुराण में सभी २७ नक्षत्रों में रोग विचार किया गया है तथा आर्द्रा, पूर्वभाद्रपद व भरणी आदि नक्षत्रों में हुए रोग घातक बताए गए हैं।[24]

अग्नि पुराण के अनुसार नक्षत्रों में रोगों के कारण होने वाले कष्टों का शमन करना हो तो गायत्री मंत्र पढ़कर पंचधान्य, तिल, घी आदि का हवन करना चाहिए और ब्राह्मण को गोदान करना चाहिए।[25]

अग्नि पुराण में सूर्य आदि की दशाओं का भी वर्णन प्राप्त होता है:-

"दशा सूर्यस्य चाष्टाब्दा इन्दोः पञ्चदशैव तु।
अष्टौ वर्षाणि भौमस्य दशसप्त दशा बुधे।।
दशाब्दानि दशा पड्गोरुनविंशद् गुरोर्दशा।
राहोर्द्वादश वर्षाणि भार्गवस्यैकविंशतिः।।[26]

इस प्रकार से उपर्युक्त सभी विषय अग्नि पुराण में ज्योतिष शास्त्र के सार के रूप में वर्णित हैं।

अग्नि पुराण के १२२ वें में अध्याय में काल गणना का वर्णन मिलता है। जिसमें गणित ज्योतिष का प्रयोग किया गया है। इस काल गणना के अंतर्गत रविवार आदि दिन, तिथि व नक्षत्र आदि की गणना की गई है।

अग्नि पुराण में रविवार आदि दिन निकालने की विधि इस प्रकार वर्णित है

कालः समागणो वक्ष्ये गणितं कालबुद्धये।
कालः समागणोऽर्कघ्नो मासैश्चैत्रादि भिर्युतः।।
द्विघ्नो द्विष्ठः सवेदः स्थात्पंञ्चाङ्गाष्टयुतो गणः।
त्रिष्ठो मध्यो वसुगणः पुनर्वेदगणश्च सः।।
अष्टरन्ध्राग्निहीनः स्यादधः सैकरसाष्टकैः।
मध्यो हीनः षष्ठीहतो लब्ध्युक्तोस्तथोपरि।
न्यूनः सप्तकृतो वारस्तद घस्ति थिनाऽयः।[27]

वर्ष अथवा शक संख्या को १२ से गुणा कर चैत्र आदि मासों को जोड़ कर दो से गुणा करके दो स्थानों पर रखकर एक स्थान की संख्या में चार और दूसरे स्थान की संख्या में ८६५ मिलाइए। इस प्रकार से प्राप्त सगुण संख्या को तीन स्थानों में रखकर बीच की संख्या को आठ से गुणा करके उन्हें चार से गुणा करना चाहिए। इस प्रकार मध्य संख्या का संस्कार करके क्रम से रखी हुई तीन संख्याओं को यथा स्थान समन्वित कर देना चाहिए। इस प्रकार उनमें प्रथम, मध्य वह अंतिम स्थानों का नाम क्रमशः उर्ध्व, मध्य तथा अद्यः यह रखा जाता है। अद्यः स्थान में रहने वाली संख्या में ३८८ तथा मध्यस्थानीय संख्या में ८७ घटाना चाहिए। तदनन्तर उसे ६० से विभाजित करना चाहिए इस प्रकार ३ स्थानों में रखें हुए अंको में से प्रथम स्थान में रखें हुए अंक को साथ से विभक्त करने पर शेष की संख्या के अनुसार रविवार इत्यादि दिन निकलते हैं।

इन वार आदि दिनों के अतिरिक्त तिथि, नक्षत्र, आदि का ध्रुवा निकालने की विधि अग्नि पुराण में वर्णित है।

अध्याय १२३ से लेकर १३९ तक युद्धजयार्णव ज्योतिष का सार वर्णित हैं। अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि यह ज्योतिष राजनीति से संबंधित है जिसका राजाओं से परस्पर युद्ध की स्थिति में उपयोग किया जाता था।

अग्नि पुराण में भी उल्लेख है -

"वक्ष्ये जयशुभाद्यर्थं सारं युद्धजयार्णवे।।"[28]

इसमें सर्वप्रथम स्वरोदय चक्र का वर्णन मिलता है जिसमें अ, इ, उ, ए आदि स्वरों, तिथियों एवं वारों तथा व्यंजनों की सहायता से समय की गणना की गई है इन उपर्युक्त पांचों स्वरों की क्रम से बाल, कुमार, युवा, वृद्ध, व मृत्यु आदि संज्ञाएं बताई गई हैं। इनका फल बतलाते हुए अग्नि पुराण में कहा गया है कि मृत्यु स्वर का उदय हो तो उस समय युद्ध यात्रा करने से मृत्यु होती है।[29]

स्वरोदय चक्र के पश्चात् राहुचक्र का वर्णन मिलता है जिसमें कहा गया है कि राहु मुख में यात्रा करने से यात्रा भंग होता है।[30]

अग्नि पुराण में १५ मुहूर्तों का वर्णन किया गया है - रुद्र, श्वेत, मित्र, सार, भट्ट, सावित्री, रोशन, जय, देव, अभिजीत, रावण, विजय, नंदी, वरुण, यम, सौम्य व भव आदि। इन मुहूर्तों में विभिन्न कार्य करने का निर्देश है जैसे मैत्र में कन्या विवाह आदि कार्य,सारभट्ट में शुभ कार्य, सावित्री स्थापना आदि कार्य, विरोचन में राज कार्य, जय देव में विजय संबंधी कार्य, रावण में युद्ध कार्य, विजय में खेती व्यापार, नंदी में वस्त्र, गृह निर्माण, वरुण में तालाब आधी खोदने का कार्य, यम में नाश कार्य, सौम्य में सौम्यकार्य करना चाहिए।[31]

इनके अतिरिक्त कुछ औषधियों एवं मंत्रों का भी वर्णन मिलता है जिनको धारण करने से संग्राम में विजय प्राप्त होती है तथा जिनसे शत्रुओं को स्तंभित किया जा सकता है।[32]

अग्नि पुराण में मंत्र पीठ एवं विद्यापीठ का विवरण उपलब्ध होता है। इन्हीं के द्वारा देवताओं ने दानवों पर विजय प्राप्त की थी तथा जिस का वर्णन भगवान शिव ने उमा को किया था -

"ज्योतिशास्त्रादिसारं च वक्ष्ये युद्धजयार्णवे।
वेलामन्त्रौषधाद्य च यथोमामीश्वरोऽब्रवीत्।।
देवैर्जिता दान्वाश्च येनापयेन तद्वद।
शुभाशुभविवेकाद्यं ज्ञानं युद्धजयार्णवम्।।"[33]

उपर्युक्त पीठों के पश्चात् विभिन्न चक्रों का भी वर्णन किया गया है जैसे- वायु चक्र, तेजस चक्र, पिङ्गला चक्र व राहु चक्र आदि। वायु चक्र में विभिन्न देवियों की पूजा करनी चाहिए। तेजस्चक्र में देवियों का निवास स्थान होता है। पिङ्गला चक्र में एक पक्षी का आकार लिखकर उसके मुख, नेत्र, ललाट, सिर, हस्त, कुक्षी, चरण, तथा पंख में सूर्य के नक्षत्र से तीन-तीन नक्षत्र लिखें। इन नक्षत्रों में यात्रा करने से विभिन्न शुभाशुभ फल मिलते हैं -

"पादे मृतिस्त्रिऋक्षे स्यात्त्रीणि पक्षेऽर्थनाशनं।
मुखस्थे च भवेत्पीडा शिरःस्थे कार्यनाशनं।
कुक्षि स्थिते फलं स्याच्च .....।"[34]

इसी प्रकार से राहु चक्र की विभिन्न दिशाओं में युद्ध यात्रा करने से विभिन्न शुभाशुभ फल मिलते हैं।

नक्षत्र निर्णय

नाना चक्रों का वर्णन करने के पश्चात् नक्षत्र निर्णय प्राप्त होता है। इसमें विभिन्न नक्षत्रों को मनुष्य आकृति में स्थापित करके रणोत्सुक यात्री के जन्म नक्षत्र का निर्णय कर उसके मनुष्यकार नक्षत्र मंडल के विभिन्न स्थानों में पडने से लाभ हानि, जय- विजय का भी निर्णय किया जा सकता है।

नक्षत्र २७ होते हैं तथा इनकी संज्ञाएं भी अलग अलग होती हैं। अग्नि पुराण के अनुसार रोहिणी, उतराषाढा, उत्तरभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनि व मृगशिरा- ये स्थिरसंज्ञक हैं। अश्विनी, रेवती, स्वाति, घनिष्ठ, शततारका ये पांच नक्षत्र क्षिप्र संज्ञक हैं। अनुराधा, हस्त, मूल, मृगशिरा, पुष्य, पुनर्वसु,ज्येष्ठा, चित्रा व विशाखा ये- नक्षत्र सभी कार्यों के लिए शुभ माने गए हैं। पूर्वाषाढ़, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद, कृतिका, मघा, आर्द्र,आश्लेषा ये नक्षत्र दारुण कहलाते हैं। स्थिरता संबंधी कार्य में स्थिर संज्ञक नक्षत्र और यात्रा में क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्र उत्तम होते हैं। सौभाग्य के कार्य में मृदु संख्यक नक्षत्र, उग्रता के कार्य में उग्रता संज्ञक नक्षत्र और भयंकर कार्यों में दारुण संज्ञक नक्षत्र उत्तम होते हैं।[35]

दग्धतिथियाँ

अग्नि पुराण में रविवार को द्वादशी, सोमवार को एकादशी, मंगलवार को दशमी, बुधवार को तृतीया, बृहस्पतिवार को षष्ठी, शुक्रवार को द्वितीया तथा शनिवार को सप्तमी, तिथियाँ दग्धतिथियाँ मानी जाती हैं।[36]

गण्डान्तदोष

अग्नि पुराण में तीन प्रकार के गण्डान्तदोष का वर्णन है -

"पुनर्वक्ष्यामि गण्डान्तमृक्षमध्ये यथा स्थितम्।"[37]

रेवती नक्षत्र में अंतिम दो दंड का समय तथा अश्विनी नक्षत्र के आदि के दो दंड का समय प्रथम गण्डान्तदोष हैं। आश्लेषा नक्षत्र के अंतिम दो दंड का समय तथा मघा नक्षत्र के आदि के दो दंड का समय दूसरा गण्डान्तदोष है। तीसरा गण्डान्तदोष ज्येष्ठा व मूल नक्षत्र के मध्य के दो दण्डों का समय है। अग्नि पुराण के अनुसार यदि जीवन की इच्छा हो तो इन गण्डान्त दोषों में शुभ कर्म नहीं करना चाहिए। इन गण्डान्त योग में शिशु का जन्म होने पर माता-पिता दोनों की मृत्यु हो जाती है।[38]

उपर्युक्त गण्डान्त योग के अतिरिक्त अन्य कई योग और हैं जिनमें उस दिन युद्ध यात्रा नहीं करनी चाहिए। ये हैं- विष्कम्भ, शूल, गण्ड, अतिगण्ड, व्याघात, वज्र, वैधृत, परिध, व्यतीपात आदि।[39]

राशिफल

"ग्रहैः शुभाशुभं वक्ष्ये देवि मेषादिराशितः।"[40]

अर्थात् अग्नि पुराण में मेष आदि राशियों के अनुसार ग्रहों द्वारा मिलने वाले शुभाशुभ कर्मों का वर्णन मिलता है।

अग्नि पुराण में विभिन्न ग्रहों के १२ स्थान बताएं गए हैं जिनमें भिन्न-भिन्न स्थान पर आने पर ग्रह भिन्न-भिन्न फल देते हैं।

१. प्रथम स्थान में स्थित चंद्रमा व शुक्र शुभदायक होते हैं।
२. दूसरे स्थान में स्थित मंगल, रवि, शनि, व राहु द्रव्य का नाश करते हैं। जबकि सोम, बुध, बृहस्पति व शुक्र शुभ फल देते हैं।
३. तृतीय स्थान में स्थित सूर्य, शनि, मंगल, शुक्र, बुध, सोम व राहु शुभ फल दायक होते हैं।
४. चतुर्थ स्थान में बुध व शुक्र शुभ फल देते हैं और शेष ग्रह भयानक फल देते हैं।
५. पंचम स्थान में बृहस्पति, शुक्र, बुध व चंद्रमा अभीष्ट फल प्रदान करते हैं।
६. छठे स्थान में सूर्य शुभ होता है यात्री के लिए गुरू व शुक्र को छोड़कर अन्य ग्रह भी शुभ होते हैं।41
७. सातवें स्थान में शनि, मंगल तथा राहु हानिकारक होते हैं जबकि इसी स्थान में गुरु, शुक्र व बुध शुभ होते हैं।
८. आठवें स्थान में बुध व शुक्र को छोड़कर शेष ग्रह अनिष्ट कारक होते हैं।
९. नौवें स्थान का फल भी अष्टम स्थान जैसा ही होता है।
१०. दशवें स्थान में एक मात्र बृहस्पति त्याज्य हैं।
११. एकादश स्थान में सभी ग्रह शुभ होते हैं।
१२. बारहवें स्थान में बुध व शुक्र को छोडकर अन्य ग्रह अशुभ ही होते हैं।[42]

अग्नि पुराण के अनुसार

"अहोरात्रे द्वादश स्यू राशयस्ता वदाम्यहम्।"[43]

अर्थात् अहोरात्र में बारह राशियाँ होती हैं जिनके लग्न का मान भिन्न-भिन्न होता है।

मीन, मेष व मिथुन लग्नों का मान चार घटी, वर्ष, कर्क, सिंह, कन्या, व तुला का मान छः छः घटी तथा वृश्चिक, धनु, मकर व कुंभ लग्न का मान पांच-पांच घटी है।[44]

ये राशियाँ सूर्य में स्थित होती हैं तथा इनका स्वभाव भी भिन्न-भिन्न होता है। इसी भिन्न स्वभाव के कारण इनके शुभाशुभ फल भी भिन्न-भिन्न होते हैं।

अग्नि पुराण के अनुसार इनका स्वभाव चर,स्थिर व द्विस्वभाव अर्थात् चर व स्थिर दोनों प्रकार का होता है।45

१. चार राशियाँ:- कर्म, मकर, तुला, मेष, इनमें विजय वह शुभाशुभ कर्म करने चाहिए।

२. स्थिर राशियाँ:- वृष, सिंह, कुंभ, वृश्चिक इनमें स्थिर कार्य करने चाहिए। इन राशियों के लग्नों में युद्ध यात्रा व चिकित्सा प्रारंभ नहीं करनी चाहिए।

३. द्विस्वभाव राशियां:- मिथुन, कन्या, मीन, व धनु इनमें किए जाने वाले सभी कार्यों में सफलता मिल जाती है। यात्रा, व्यापार, युद्ध, विवाह, राजदर्शन करने में सफलता, लाभ, वृद्धि, जय, आदि की प्राप्ति होती है।[46]

राशिफल के पश्चात् कोट चक्र का वर्णन अग्नि पुराण में मिलता है। यहां कोट से तात्पर्य दुर्ग से है। दुर्ग निर्माण एवं दुर्ग से युद्ध करने में इस कोट चक्र की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।[47]

१२९वें अध्याय में अर्द्धकांड वर्णन मिलता है। उल्कापात, भूकंप, तूफान, ग्रहण, मंडल व दिग्दाह आदि प्राकृतिक व भयंकर आपदाओं से वस्तुओं के भाव में वृद्धि हो जाती है। यह मूल्य वृद्धि भिन्न-भिन्न मासों में एवं भिन्न- भिन्न वस्तुओं की पृथक् ही होती है जैसे-

"वैशाखे चाष्टमे मासि षड्गुणम् सर्वसङ्गहम्।
ज्येष्ठे मासि तथाऽऽषाढे यवगोधूमधान्यकै।"[48]

मंडल वर्णन

अग्निपुराण में चार प्रकार के आकाशीय मंडलों का वर्णन किया गया है। (१) आग्नेय मंडल, (२) वायव्य मंडल, (३) वरुण मंडल, (४) माहेंद्र मंडल।

आग्नेय व वायव्य मंडल हानिकारक होते हैं। वरुण मंडल लाभदायक तो होता है किंतु इस मंडल में राजाओं में परस्पर महासंग्राम होता है। माहेंद्र मंडल उत्तम बताया गया है।[49]

ग्रहण भी विविध प्रकार के होते हैं

मुखग्रास व पुच्छग्रास।

जब चंद्रमा, राहु तथा सूर्य एक राशि में हों तब मुख ग्रास अन्यथा पुच्छ ग्रास होता है। चंद्रग्रहण पूर्णिमा को होता है।50

१३१वें अध्याय में नाना चक्रों का वर्णन किया गया है। ये चक्र हैं घात चक्र, नर चक्र, व जय चक्र। युद्ध काल में इन चक्रों के द्वारा जय पराजय का संकेत प्राप्त होता है। अग्नि पुराण में इन चक्रों की निर्माण विधि का उल्लेख मिलता है।

इन चक्रों के पश्चात् लाभ- हानि सूचक सेवा चक्र का वर्णन मिलता है इस चक्र के द्वारा माता- पिता, भाई व पति-पत्नी को एक दूसरे से प्राप्त होने वाली सेवा का ज्ञान हो जाता है।[51]

अग्नि पुराण में सद्यः प्रसूत शिशु के ग्रहपति अर्थात् कुंडली में स्थित राशि के अनुकूल ग्रहों के स्वामी के स्वरूप का भी वर्णन किया गया है। शिशु की शारीरिक व मानसिक योग्यताएं इन्हीं ग्रहपति के बल के अनुसार निर्धारित होती हैं। जैसे जिस शिशु के कुंडली स्थित लग्न में सूर्य का क्षेत्र भी हो तो वह बालक न तो अधिक दीर्घ न अति कृश तथा न ही स्थूल होता है। वह समान अंगों तथा गौर वर्ण वाला होता है।[52]

अग्नि पुराण में १३३वें अध्याय के परवर्ती आधे भाग से लेकर १३८वें अध्याय तक विभिन्न तांत्रिक क्रियाओं का वर्णन मिलता है। इन क्रियाओं के अनंतर विभिन्न मंत्रों एवं यंत्रों से शत्रु के नाश एवं अपनी विजय की कामना की जाती है। इन अध्यायों में मुख्य रूप से भंगविद्या, मृत्युंजय मंत्र, भैलखीविद्या मंत्र, त्रिलोक्यविजय विद्या मंत्र, संग्राम विजय विद्या मंत्र, नक्षत्र- चक्र, महामारी विद्या मंत्र आदि का वर्णन है। इसके अतिरिक्त इन मंत्रों का भी वर्णन है जिन से मारण, मोहन, स्तंभन, आकर्षण, वशीकरण, एवं उच्चाटन आदि षट्कर्म सिद्ध होते हैं। इन षट्कर्मों के द्वारा शत्रु को नष्ट किया जा सकता है।

अग्नि पुराण के १३९वें अध्याय में साठ संवत्सर का वर्णन है। इस अध्याय में प्रभव, विभव, शुक्ला, प्रमोद आदि ६०वर्षों के नामों का वर्णन करके उन उन वर्षों में होने वाले शुभ अशुभ फलों का उल्लेख भी किया गया है जैसे -

"प्रभवे यज्ञकर्माणि विभवे सुखिनो जनाः।
सिद्धार्थे सिध्यते सर्व रौद्रे रोद्रं प्रवर्तते।
दुर्मतौ मध्यमा वृष्टिर्दुन्दुभिः क्षेमधान्यकृत्।।"[53]

इस प्रकार से उपर्युक्त विवेचित १२३वें अध्याय से लेकर १३९वें अध्याय प्रयन्त युद्धज्यार्णव ज्योतिष का सार अग्नि पुराण में वर्णित है।

इसके अतिरिक्त विवेच्य पुराण में वश्यादियोग योग वर्णन, षट्वत्रिंशपदज्ञान वर्णन एवं मंत्रौषध वर्णन भी उपलब्ध होता है। इन तीनों ही अध्यायों (१४०-१४२) में विभिन्न औषधियों का उल्लेख मिलता है। जिनमें से प्रथम अध्याय में (१४०वें) अध्याय में विभिन्न औषधियों का वर्णन है जिनका प्रयोग करने से दूसरे मनुष्य को वशीकृत किया जा सकता है। १४१वें अध्याय में विभिन्न रोगों का निवारण करने वाली तथा विभिन्न दोषों को दूर करने वाली औषधियों का वर्णन है। १४२वें अध्याय में मन्त्रौषध का वर्णन है ये सब फलों को देने वाले होते हैं।

इस प्रकार से अग्नि पुराण में मुख्य रूप से ज्योतिष शास्त्र एवं युद्धजयार्णव ज्योतिष का सार वर्णित है। ज्योतिष शास्त्र को मूल रुप से चतुर्लक्षात्मक बताया गया है किंतु वर्तमान

समय में इतना विशाल ज्योतिष शास्त्र विषयक कोई भी ग्रंथ उपलब्ध नहीं है तथा इसी प्रकार से 'युद्धजयार्णव ज्योतिष' नाम का ग्रंथ भी संप्रति उपलब्ध नहीं है किंतु इस ग्रंथ का नाम उल्लेख निबंध ग्रंथों में प्राप्त होता है अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि विवेच्य पुराण में फलित एवं गणित दोनों तरह के ज्योतिष का वर्णन है। युद्धजयार्णव ज्योतिष में तांत्रिक क्रियाओं का वर्णन मुख्य रूप से दृष्टिगोचर होता है।

सन्दर्भ सूची

1. Sanskrit English Dictionary : V.S.Apte: p.458
2. भारतीय ज्योतिष, पृ.१७
3. The Early Upanisads, p.436
4. पाणिनीय शिक्षा, ४१-४२
5. भारतीय ज्योतिष का इतिहास, पृ.३६
6. बृत्संहिता, १/१
7. संस्कृत साहित्य का इतिहास : वाचस्पति गौरौला, पृ.६६५
8. भारतीय ज्योतिष का इतिहास, पृ.४५,७९
9. अ.पु., १२१/१
10. अग्निपुराणम्(भूमिका),पृ.१४
11. अ.पु.,१२१/२
12. अ.पु.,१२१/३-४
13. ज्योतिर्विदाभरणम्,पृ.३७२
14. अ.पु.,१२१/४-७
15. अ.पु.,१२१/७-८
16. अ.पु.,१६६/१०-१७
17. अ.पु.,१५३/२-६
18. अ.पु.,१२१/९,१०,१२,२४-२८
19. अ.पु.,१२१/१४
20. अ.पु.,१२१/३२
21. अ.पु.,१२१/३२
22. अ.पु.,१२१/२५-२७
23. अ.पु.,१२१/७१-७२
24. १२१/७३-७७
25. अ.पु.,१२१/७७-७८
26. अ.पु.,१२१/७८-७९
27. अ.पु.,१२२/१-४
28. अ.पु.,१२३/१
29. अ.पु.,१२३/७
30. अ.पु.,१२३/१२
31. अ.पु.,१२३/१५-२०
32. अ.पु.,१२३/२३-३४
33. अ.पु.,१२४/१-२
34. अ.पु.,१२५/३२-३३
35. अ.पु.,१२६/१३-२१
36. अ.पु.,१२६/२२-२३
37. अ.पु.,१२६/३३
38. अ.पु.,१२६/३३-३६
39. अ.पु.,११७/१-२
40. अ.पु.,१२७/३
41. अ.पु.,१२७/३-८
42. अ.पु.,१२७/९-११
43. अ.पु.,१२७/१२
44. अ.पु.,१२७/१३-१४
45. अ.पु.,१२७/१४
46. अ.पु.,१२७/१५-१८
47. अ.पु.,१२८,अध्याय
48. अ.पु.,१२९/३
49. अ.पु.,१३०/१-१७
50. अ.पु.,१३०/१७-१९
51. अ.पु.,१३२/१-२
52. अ.पु.,१३३/१-२
53. अ.पु.,१३९/१,१२